श्रीगणेशाय नमः

वैदिक वाङ्मय की संक्षिप्त परिचयः

– **संहिताशास्त्रि अर्जुन प्रसाद बास्तोला**

१.१ विषयप्रवेशः

इस् संसार में २०० से ज्यादा देश है । इन् सभी देशों का अलग–अलग परिचय है । इन् सभी देशों का अपना अपना भाषा, धर्म और संस्कृति है । अभी इस संसार में करीब ७ अरब जनसंख्या हैं । यह सव मनु के सन्तानें है, मानव है यही सिद्धान्त लेकर वैदिक और लौकिक वाङ्मय में विभाजित अमरभाषा, देवभाषा वा देववाणी की नाम संस्कृत है । संस्कत कहने का मतलव परिस्कृत, संस्कार किया हुवा, शुद्ध सभ्य, सम्मुनत, सम्पन्न, उदार होता है । भाषा का मतलव एक दुसरों की भावना एक आपस में व्यक्त करने का सव सं सरल, सव से छोटा, सव से सहज ध्वन्यात्मक (वर्णनात्मक) अभिव्यक्ति का माध्यम है । भाषा अभिव्यक्ति का माध्यम है । भाषा का अर्थ अभिव्यक्ति, अनुसार अपनी मन की वात (आशय) व्यक्त करना है । संस्कृतव्याकरणानुसार **भाषणाभिव्यक्तौ, भाषा–प्रवचने, भाषा–कथने प्रकटने वा भाषा प्रकाशने** आदि अनेक अर्थ लगने से भाष् धातु से स्त्रीत्व में टाप् प्रत्यय लगाकर बन्नेवाला शब्द को भाषा कहते है । यह शब्द विषेशकर शुद्ध और मौलिक। मूल रुप में ही बन्नेवाला संस्कत भाषा का शब्द है ।

इधर संस्कत भाषा कहने से संयुक्त या जोडी शब्द से शुद्ध, परिस्कृत, प्रकति और प्रत्यय से व्याकरण की नियमानुसार बन्नेवाला परिस्कृत भाषा को समझ्ते है । आज की अत्याधुनिक प्रगति करने वाले विश्व की वैज्ञानिकों ने कम्प्युटर के लिये एक नियम में बांधने वाले सूत्र - फारमुला) की आधार में नयें–नयें शब्द बना सक्ने, जिस समय में जो जो अर्थ देने वाला बनाने के लिये वही शब्द तत्काल बनाने वाले, सरल एवम् अत्यन्त परिस्कृत नियम में बंधे हुये भाषा की खोज करते हुये संस्कत भाषा को ही कम्प्युटर के लिये अत्यन्त उपयुक्त एकदम् सही, भाषा हो सकता है और भविष्य में संस्कत भाषा को ही कम्प्युटर में प्रयोग हो सकने वाला भाषा के रुप में इस को लिया जायेगा सोचकर इसी नतिजे पर पहुंचे है ।

वाक् + मयट् होकर वाङ्मय शब्द बना है । वाक् का 'क्' मयट् का 'म' से मिलकर प्रातिशाख्य व्याकरणानुसार 'पञ्चमे पञ्चमम्' नाम की नियम से सन्धि होकर प्रतिशाख्य पद की पहला अक्षर पांचवा वर्ण दुर तक् है या उस से मिलकर पहला वर्ण को रहना है तो आगे का शब्द पिछे की वर्ण भी पांचवा वर्ण बनाना पड्ता है कहनेवाले नियम से 'वाङ्मय' हुवा है, क्योंकी 'मय' शब्द में पड्। हुवा 'म' पवर्ग की पांचवा अक्षर है । 'क' वर्ग की पांचवा अक्षर 'ङ' है । संस्कृत वाङ्मय अर्थात संस्कृत भाषा की शब्द (वाक्) या वाणीयां, वाक्य रचनायें संस्कृत में मिलनेवाले पद्य और गद्यों इस भाषा में सृष्टिकाल से अद्यावधिक आजतक रचित लौकिक वातों की कुञ्जियां संस्कृतवाङ्मय अर्थात संस्कृतसाहित्य और वेद से सम्बद्ध संग्रहों की वैदिकसंस्कृत वाङ्मय कहते हैं ।

प्रस्तुत आलेख में इसी संस्कृत भाषा में मूल रुप में लिखा हुवा शब्दों (वाणी/वाक्) की संग्रह (कुञ्जी) या वाङ्मय को अर्थात संस्कृतसाहित्य की छोटी परिचय देने का प्रयाश किया हुवा है ।

१.२ संस्कृतवाङ्मय की प्रकारः

मूलरुप में संस्कृत में रचे हुये कृतियों की संग्रहों की साझा नाम संस्कृतवाङ्मय हैं । इस को पढ्ना, पढाना आसान हो इसी उद्येश्य से इस को दो भाग में विभाजित कर के अध्ययन अध्यापन किया जाता है । (१) वैदिक संस्कृतसाहित्य और (२) लौकिक संस्कृतसाहित्य के रुप में दो भाग में विभाजन किया हुवा है । यद्यपि दोनो विभाजन में गद्य और पद्य ही है, फिर भी लोक व्यवहारोपयोगी वातें लौकिक और वेदोक्त कर्म चिन्तन की वातें वैदिक वाङ्मय की रुप में अलग् पढा गया है । ऐसा हो जाने का एक कारण वैदिकव्याकरण र लौकिकव्याकरण की अनेकों नियम अलग–अलग होना भी है । वैदिक व्याकरण का विशेषग्रन्थ का नाम प्रातिशाख्य है । प्रातिशाख्य प्रत्येक वेदों की अलग–अलग है । लौकिक व्याकरण में पाणिनीय व्याकरण की नाम सर्वोपरि है । चान्द्रव्याकरण, ऐन्द्रव्याकरण आदि अन्य व्याकरण भी संस्कृत भाषा में है, फिर भी प्रायः पाणिनी का ही सर्वत्र प्रचार है ।

वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत की प्रायः वहुत नियम एक ही है, फिर भी वेद में प्रयुक्त किया गया शब्द और प्रत्ययों लौकिक व्यवहार में प्रयुक्त नहीं किया जाता है । विभक्ति प्रत्यय (एक विभक्ति की जगह दुसरा विभक्ति का प्रयोग, एक वचन की जगह दुसरा वचन, एक लिङ्ग की जगह दुसरा लिङ्ग अर्थात स्त्रीलिङ्ग की पुलिङ्ग, पुलिङ्ग की स्त्रीलिङ्ग, एक धात्वर्थ की दुसरा धात्वर्थ आदि का प्रयोग कहीं दुसरा रुप, कहीं वो नियम कहीं दुसरा नियम, कहीं नियम ही नहीं लगना जैसे अनेकों (बाहुलक) नियमों वैदिक वाङ्मय में खास कर् वेद में ही प्रयोग किया गया मिलता है । सूत्र ग्रन्थ, पुराण ग्रन्थ, आदि में कहीं कहीं आर्ष प्रयोग अर्थात ऋषियों ने मन्त्र द्रष्टाओं ने ही ऐसा प्रयोग किया गया स्विकार किया गया है ।

१.३ वैदिकवाङ्मयः

वैदिक वाङ्मय अर्थात वैदिक संस्कृतसाहित्य अन्तर्गत ४ वेद और वेदाङ्ग, उपवेद, उपाङ्ग आदि पड्ते हैं । वैदिक वाङ्मय को समझ्ना आसान हो इसीलिये हर वेद का परिचय अलग–अलग रुप में परिचय कराया गया है । मूलतः ४ वेदों में ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद है । जिस में प्रत्येक वेदों का अपना–अपना अङ्गोपाङ्ग और अवान्तर भेद एवम् शाखाऐं विस्तार कर के ११३१ वेद शाखा बन जाने की वात वैदिकसाहित्य से ज्ञात होता है । इस में इन्ही चारों वेदों की अलग–अलग परिचय देने का प्रयत्न किया गया है ।

वेद शब्द दन्तोष्ठस्थानीय पिछ्ला अन्तस्थ व वर्ण में एकार लगाकर दन्तस्थानीय अकारान्त द की संयुक्त ध्वनि से उच्चारण करते है । तसर्थः वेद शब्द को ध्वनिगत विश्लेषण करने पर व्+ए+द्+अ ध्वनि की संयुक्त रुप वेद उच्चारण हो जाता है ।

१.३.१ व्युत्पत्तिः

वेद शब्द संस्कृतमूल तत्सम है । संस्कृत–व्याकरणानुसार ज्ञानार्थक, सत्तार्थक, विचारार्थक और लाभार्थक विद् धातु से 'अच्' या 'घञ्' प्रत्यय लगाकर बनता है । इसीकारण वेद का पूण अध्ययन करने से आध्यात्मिक उपासनात्मक और भौतिक क्रियात्मक ज्ञान प्राप्त होने से ज्ञानार्थक, ईशवरीय सत्ता **सर्व खल्विदं ब्रह्म** का ज्ञान होना सत्तार्थक, आत्मा और परमात्मा, जीव और जगत् की बिषय में भिन्न तार्किक ज्ञान प्राप्त होने वाले ऐहिक (इस लोकसम्बन्धि) और पारलौकिक

(परलोकसम्बन्धि) प्रेय और श्रेय प्राप्त होना, लाभार्थक विद् धातु का अर्थ है मानकर विद्वानों ने सहमती दी है ।

संस्कृतवाङ्मय में वेद शब्दों का दो अर्थ होता है: (१) ज्ञान या ज्ञानराशि, (२) कुशा की मुष्ठि, इन दो अर्थों की आधार में इन का स्वराङ्कन भी भिन्न रहेता है । कुशामुष्ठि की अर्थवाला वेद शब्द की अन्तोदत्त स्वर होता है । वेदों की शब्दों का अर्थ स्वर की भी आधार में सन्दर्भानुसार कर पाने के लिये वेदाध्ययन गुरु–परम्परापूर्वक स्वाध्याय से ही सम्भव होता है ।

१.३.२ उद्भवः

तस्यैतस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतत् (श.ब्रा.) । सनातन वैदिक धर्म अर्थात हिन्दू धर्मावलम्वी वेद को ईश्वरीय श्वासप्रश्वास की रुप में रहनेवाला अपौरुषेय ज्ञानभण्डार (ब्रह्मविद्या) मानते है । धर्मशास्त्र और वेद न मान्नेवाला या निन्दा करनेवाला को नास्तिक से नास्तिक या परनास्तिक मानते है । **नास्तिको वेदनिनदकः** (मनु) । प्रायः आधुनिक विद्वान् विशेषतः पश्चिमी विद्वानों ने वेदों का उद्गम स्विकार करते है । वै इसापूर्व ६००० से २००० इ.पू. तक की समय को वेद की उद्भवकाल या रचनाकाल मानते है । प्रो. मैक्समुलर, कीथ, राथ, ग्रासम्यान, मैकडोनल आदि विद्वान् इसी मत के अनुयायी हैं । पूर्वीय विद्वान् तिलक, बालकृष्ण, शङ्कर दिक्षित आदि ने इस्वीपूर्व ५० हजार से इ.पू. ८००० साल आगे वेदों का उद्गम हुवा मानते है । वस्तुतः वेद ऋषियों द्वारा तपः साधना करके आत्मसात् किया गया वात हैं । **साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवु निरुक्त** हिन्दूओं की वर्तमान में प्रचलित पञ्चाङ्ग गणनानुसार १ अर्ब ९५ करोड ५८ लाख ८५ हजार (शून्य सय) ९३ साल आगे इस कल्प की सृष्टि शुरु हुवा मानते है । इस आधार में वेद का उद्गम लगभग २ अर्ब साल आगे हुये लगता है । यही वात नेपाली पञ्चाङ्ग के मुखपृष्ठ में दिया हुवा सृष्टितो गताब्दाः से स्पष्ट होता है । दुसरी वात हिन्दूओं वदों के शाखाओं के आचार्यों को शाखाप्रवक्ता और ऋषियों को मन्त्रद्रष्टा मानते है, मन्त्रकर्ता नहीं । इसीलिये **– अनादिनिधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा । आदौ वेदमयी वाणी यतः सर्वा प्रवृत्तयः – महाभारत ॥** वेद की समय की वारे में बहुत से मत–मतान्तर है फिर भी विश्व के सव से पुरानी और जेष्ठ साहित्य रचना ऋग्वेद ही है कहने में सभी सहमत है ।

१.३.३ वेद के लक्षण और विषयः

(१) आचार्य आपस्तम्ब ने **मन्त्रब्राह्मणर्योवेदनामधेयम्** अर्थात मन्त्र और ब्राह्मण वेद है कहे है । सायण आदि बहुत आचार्य इस में सहमत है ।

(२) आचार्य पारस्कर ने विधि (कर्म की विधान), विधेय (कर्मों की विभाग) और तर्क (चिन्तादर्शन) की रुप में वेद की लक्षण करते है ।

(३) किसी ने कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड और ज्ञानकाण्ड की रुप में वेद की परिभाषा की है ।

(४) आचार्य जैमिनी, कुमारिल भट्ट, प्रभाकर मिश्र आदि मीमांसक विधि, मन्त्र, नामधेय, निषेध और अर्थवाद की रुप में वेद की लक्षण वताते है ।

(५) कतिपय आचार्यों ने मन्त्र, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषत् की रुप में वेद की लक्षण और विषय परिभाषित किया है । संभवतः इन्ही ४ भाग में विभक्त वेद को आज के विद्वानों ने वेद की रुप में पहिचान किया है ।

१.३.४ ऐतिहासिक विकार और विस्तारः

शुरु में वेद एक ही था । कालान्तर में लोगों की मेधा (धारणावती बुद्धि) मलिन होते जाने से सभी को पढ्ना और कार्यान्वयन करना बहुत कठिन होने लगा । नेपाल की पश्चिमी भू–भाग दमौली की एकान्त तपोवन में बैठ्कर द्वैपायन व्यास ने वेद की चार भाग लगाये । उन्हों ने यज्ञीय कार्य की दृष्टि ने होता के लिये ऋग्वेद, अध्वर्यु के लिये यजुर्वेद, उद्गाता के लिये सामवेद और ब्रह्मा से होनेवाला मानस यज्ञ (जप, अभिचार, शान्ति–पुष्टिकार्य) के लिये अथर्ववेद का अलग–अलग सङ्कलन करके वेद की विस्तार की है । वेद की विस्तार करने से उन का नाम वेदव्यास से प्रसिद्ध हुये । क्रमशः प्रत्येक वेदों की अलग–अलग मन्त्र, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषतों की भी विभाजन हुवा । समय की गति के साथ चारों वेद की शाखाऐं भी विस्तार होते गये । वैदिक साहित्य बहुत बड्ा होता गया । महाभारतकाल के वाद व्याकरण के विद्वान पतञ्जलि के समयतक वेदवेदाङ्ग की लगभग ४,३२,००० ग्रन्थ हो गये ।

वैदिक वाङ्मय की विस्तार होते होते ऋक्, यजु, साम हौर अथर्ववेद के रुप में विभक्त चार वेदविद्या की ब्राह्म सम्प्रदाय हुये । ब्राह्म सम्प्रदाय से वैसम्पायन होते हुये विकास हुवा । आदित्य सम्प्रदाय आदित्य से महर्षि याज्ञवल्क्य होते हुये विस्तार हुये । चारों वेद की सभी शाखाऐं मन्त्र, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषतों मे अलग हुये ।

१.३.४.१ ऋग्वेदः

छन्द में बंधे हुये अर्थात अक्षर और पाउ तक की गणना किया गया पद्यमन्त्र ऋग्वेद होतृकार्य से सम्बद्ध मन्त्र की संङ्ग्रह है । इस में ज्ञान–विज्ञान, इतिहास, संस्कृति और धर्म के अनेक प्रसङ्ग है और करीब ११ हजार मन्त्र है । वेद को शुद्ध रखने के लिये प्राचिन ऋषियों ने वेद के अक्षर और शब्द भी गीनकर वेद में प्रक्षिप्त पाठ नहीं मिलता । गणनाकुसार ऋग्वेद के मन्त्र भाग में १ लाख ५३ हजार ८ सय ३६ शब्द और ४ लाख ३२ हजार अक्षर सङ्गृहीत है । ऋग्वेद के मन्त्र दो तरह से सङ्ग्रह किया हुवा हैः (१) अष्ठकाध्याय, सूक्त और मन्त्र, (२) मण्डलानुवाक, सूक्त और मन्त्र । इन दिनो अनुवाक छोंड्कर मण्डल, सूक्त और मन्त्र का ही ज्यादा प्रचलन है । ऋग्वेद में कूल १०२८ सूक्त है । ऋग्वेद में २१ शाखाऐं थी । आजकल शाकल और वाष्कल की ज्यादा प्रचलन है । अन्य शाखाऐं प्रायः लुप्त है ।

१.३.४.२ यजुर्वेदः

गद्यात्मक मन्त्रों की संङ्ग्रह यजुर्वेद है । यजुः का अर्थ दण्डक (गद्य) है । इस वेद में अध्वर्यु नाम के ऋत्विक्कार्य और लौकिक पारलौकिक धर्मोपासना और ज्ञान की वातें है । यजुर्वेद की शुक्ल और कृष्ण दो मुख्य सम्प्रदाय है । शुक्ल का मलतव साफ, सफेद और ताजा । कृष्ण का मतलव (शुक्ल के विपरित) काला, गन्धा, पुराना या मलिन है । वेद के सम्बन्ध में यह वात कुछ अलग है । जो यजुर्वेद सफेद वाजी (घोडे) के रुप में सुरज से प्राप्त हुवा, जिस में मन्त्र, ब्राह्मण की मिलावटी रुप साङ्कर्यजन्य कृष्णता नहीं है, वो शुक्लयजुर्वेद के नाम से प्रसिद्ध है । सव से पहले सुरज से याज्ञवल्क्य ने प्राप्त करके माध्यन्दिन आदि १५ लोगों को पढाया, फिर भी माध्यन्दिन और काण्व नाम के दो शाखाऐं ही शुक्लयजुर्वेद में आजकल मिलता है । नेपाल में केवल माध्यन्दिन का ही सव से ज्यादा प्रचार है । कई आचार्य याज्ञवल्क्य के पिता अर्थात गुरु के नाम वाजसनेय के नाम से शुक्लयजुर्वेद रह गया है मानते हैं । शुक्लयजुर्वेद में ४० अध्याय और कृष्ण में १२० अध्याय है । शुक्ल में १९७५ मन्त्र है तो कृष्ण में करीब ३१ सौ मन्त्र और १५ हजार ब्राह्मण मन्त्र है । शुक्लयजुर्वेद माध्यन्दिन में १०० अध्याय १४ काण्ड वाला शतपथ ब्राह्मण अलग है । शुक्लयजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा में ९५२५ अक्षर और १२३० अनुस्वार (गुँ) है ।

कृष्णयजुर्वेद के ८६ शाखाऐं थी । इस सम्प्रदाय के प्रथम उपदेशक ब्रह्मा है । वैशम्पायन ने ब्रह्मा से प्राप्त करके सिखे हुये विद्या याज्ञवल्क्य से वापस लिया और मन्त्र ब्राह्मण के मिलावटीपन भी होने से सङ्करता (मिलावटी, मलिनता) के कारण कृष्णयजुर्वेद कहते है बोलकर श्रमिद्भागवत आदि पुराण की अनुशीलन से पता चलता है । कृष्णयजुर्वेद के आचार्य वैशम्पायन ने तित्तिर आदि ८६ छात्रों को पढाया, लेकिन आजकल तैत्तिरीय, मैत्रायणी और कठ, कठ–कपिष्ठल शाखाऐं ही सुलभ है ।

१.३.४.३ सामवेदः

वृहदारण्यकानुसार सा+अम=साम है । 'सा' का अर्थ ऋक् और 'अम' का अर्थ श्वर है । अतः साम का अर्थ गीत (सुर, ताल और लयबद्ध गाना) है । छन्दोबद्ध (ऋक्) में विविध स्वर, ताल, लय आदि मिलाकर उद्गाता से गानेवाला मन्त्रों का सङ्ग्रह सामवेद है । वेद का रहस्य समझ्ने के लिये सामवेद को समझ्ना जरुरी है । "**सामानि यो वेत्ति स वेदतत्वम्**" "**वेदानां सामवेदोऽस्मि**" आदि से सामवेद की श्रेष्ठता स्पष्ट होता है । उद्गीथ (ओङ्कार) के गाना सामवेद से होता है । सभी वेदों में ओङ्कार श्रेष्ठ है । सामवेद के पूर्वार्चिक और उत्तरार्चिक करके मूलतः दो भेद है । आर्चिक का मतलव ऋक्समुह है । सामान्यतया १०।१० ऋचाओं का समुह 'दशति' के रुप में सामगायन होता है । सामवेद के मन्त्रों की सङ्कलन छन्द और देवता के आधार पर हुवा है । सामवेद में कूल १८७५ मन्त्र है । उन में से १५०४ ऋग्वेद के और वांकी सामवेद के स्वतन्त्र मन्त्र है । सामवेद का कौथुम, राणायनीय, जैमिनीय आदि १००१ शाखाऐं थे । पतञ्जलि के भाष्यानुसार १०० शाखाऐं थे । अभी पूर्वोक्त तीन शाखाऐं ही मिलते है । सामवेद में कूल १ लाख ४४ हजार गायन र गायन (गिति, लयपद्धति) के संङ्ख्या १४ हजार ८ सय २० होता था जो चरणव्यूह जैसे ग्रन्थ से स्पष्ट पता चलता है । नारदिय शिक्षानुसार सामवेद के स्वरमण्डल निम्न हैः

स्वरः –ष–ऋ–ग–म–प–ध–नि=७, ग्राम–३, मूर्च्छना–२१, आदि । सामवेद के इन सात स्वरों को बाँसुरी में इस प्रकार व्यवस्थित किया हुवा हैः

साम		वेणु (बाँसुरी)	याज्ञवाल्क्य के मतानुसार स्वरसाम्य
(१)	प्रथम	म	= मध्यम कच्याङ्कुरुङ पन्छि के स्वर
(२)	द्वितीय	ग	= गान्धार गाय के स्वर
(३)	तृतीय	ऋ (रे)	= ऋषभ बकरी के स्वर
(४)	चतुर्थ	सा ष ऽऽ।	= षड्ज मौर के स्वर
(५)	पञ्चम	नि	= निषाद हाथी के स्वर
(६)	षष्ठ	ध	= धैवत घोडे के स्वर
(७)	सप्तम	प	= पञ्चम कोयल के स्वर

सामवेद में इन्ही सातों स्वरों का सङ्केत १ –७ अङ्क दिया हुवा है । सामविकार ६ प्रकार के हैः विकार, विश्लेषण, विकर्षण, अभ्यास, विराम और स्तोभ । इसी तरह देहातो में गायाजानेवाला गाना, वेदगान और अरण्य में गायाजानेवाला आरण्य और इन्ही दोनों की मिश्रित गाना ऊह और उह्य तक ४ प्रकार के गानविधा के भिन्न ग्रन्थ है । छान्दोग्योपनिषतानुसार साम के सात भेद में हिङ्कार प्रस्ताव, आदि उद्गीय प्रतिहार, उपद्रव और निधन पड्ते है । सामवेद के जैमिनीय

शाखा पहले संस्कृत विश्वविद्यालय वनारस से और दुसरा लाहौर से छपाहुवा है । कौथुम शाखा के सामवेद श्रीनारायण स्वामी ने वि.सं. १९९९ मे छपाये थे ।

१.३.४.४ अथर्ववेद:

वेद के स्वरुपानुसार ऋक् (छन्दोबद्ध), यजु (दण्डक, गद्य) और साम (गीतबद्ध) करके ३ भेद होने से वेदत्रयी कहते हैं फिर भी यज्ञ के साथ ही लोकपरक वेद की विभाजन करते हुये अथर्ववेद चौथा व अन्तिम वेद है । कई आधुनिक विवेचकों ने अथर्ववेद को अर्वाचीन कहते है, फिर भी वर्तमान इराक की प्राचिन नाम काल्डिया हुवा करता था और उधर इ.पू. ५००० साल पूर्व तुरायिन का उपनिवेश हुवा करता था । अथर्ववेद के कही स्थान (१३औं काण्ड के) में मिलनेवाले 'तैमात', अ, 'आसुजित', 'उर्वशी' आदि शब्दों की आधार में लोकमान्य 'तिलक' ने इ.पूर्व ५००० साल पूर्व ही अथर्ववेद की रचना किया गया मानते है ।

ब्रह्मा नाम के ऋत्विक् के साथ सम्बद्ध है । अथर्ववेद को 'अथर्वाङ्गिरस' भी कहते है, क्योंकि अथर्वा और अङ्गिरस ऋषिद्वारा दृष्ट–सृष्ट मन्त्रों की सङ्ग्रह अथर्ववेद है । अथर्ववेद में सामान्यतया शान्तिक, पौष्टिक, आभिचारिक, सम्मोहन, उच्चाटन, औषधोपचार, ज्ञानविज्ञान आदि अनेक विषय है । सम्भवत: वेदों में सव से ज्यादा वैज्ञानिक वातें अथर्ववेद में मिलेगा । इस वेद में (शौनक शाखा में) सामान्यतया २० काण्ड, ७३१ सूक्त और ५९८७ मन्त्र है । ब्रह्माण्डपुराण (२।१।३६) और वायुपुराण (६५।२७) अनुसार अथर्ववेद कृत्यविधि (अभिचार और शान्तिपुष्टि) की कुञ्जी है । राजा के लिये और राजपुरोहित के लिये अथर्ववेद की ज्ञान होना अनिवार्य होता था । तीनों वेद इस लोक के अलावा परलोक के लिये ज्यादा और उपकृत करते है, फिर भी अथर्ववेद सामान्यतया इसी लोक के साथ ज्यादा और परलोक के लिये कम ही सम्बन्ध रखते है । राष्ट्र में आन्तरिक और वाह्य उपद्रव, आतङ्क, अशान्ति आदि के रोकथाम करने के लिये अथर्ववेद का महत्व रहने की वात महाकवि कालिदास आदि ने उल्लेख किया है ।

वेदव्यास ने सर्वप्रथम सुमनु को अथर्ववेद सिखाया । सुमन्त के वाद अथर्ववेद भी पिप्पलाद, तौद (स्तौद), मौद, शौनकीय, जाजल (जाबाल), जलद, ब्रह्मवद, देवदर्श और चार णवैद्य सहित ९ शाखाओं में विस्तार हुवा । उन में से अभी पिप्पलाद और शौनकीय शाखा ज्यादा प्रचलित है ।

अथर्ववेद के तीन किस्म के संहिता है: (१) आर्षीसंहिता, (२) आचार्यसंहिता और (३) विधिप्रयोग–संहिता । अथर्ववेद की सामान्य विभाजन काण्ड, सूक्त और मन्त्र के रुप में प्रचलित है । अथर्ववेद की विषय अध्यात्म, अधिदैव और अधिभूत तीन प्रकरण में वट्कर क्रमश: ऋध्यात्म में ब्रह्म, परमात्मा और चातुर्वर्ण्य तथा अधिभूत में राजा, राज्यप्रशासन, संग्राम, शत्रुवाहन और अधिदैव में देवता, यज्ञ, काल आदि के सम्बन्ध में अनेक महत्वपूर्ण वातें प्रतिपादित है । इस के अलावा भैषज्य, आयुष्य, पौष्टिक, स्त्रीकार्य, राजकर्म आदि की विस्तृत वर्णन भी अथर्ववेद में मिलता है ।

१.३.४.५ ब्राह्मण:

वेद की मन्त्रसंहिता के वाद ब्राह्मण–संहिता का क्रम आता है । ब्राह्मण शब्द जातिवाचक पुलिङ्ग और ग्रन्थवाचक नपुङ्सक लिङ्ग में है । वेद के ब्राह्मण भाग वैदिक धर्म की यज्ञपूजा (देवद्विजादि), सङ्गति (दान), धर्म (इष्ट और आपूर्त स्वार्थ–परार्थ) संस्कार, परम्परा, सामाजिक मर्यादा, कर्मसंस्कार, कर्मकाण्ड, इतिहास, भूगोल, ज्ञान–विज्ञान, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, प्राणिशास्त्र, चतुवर्ग (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) शास्त्र आदि अनेक विषयों की मूल ग्रन्थ है । मन्त्र भाग से

संक्षेप या सङ्केत किये हुये वात ब्राह्मणभाग में व्याख्या, विस्तार, उदाहरण, ऊह, अपोह, आदि से स्पष्ट किया हुवा है । बहुत पहले वेदों की ११३१ शाखाऐं १ हजार १ सौ ३१वा अलग अलग ब्राह्मणग्रन्थ में था । ब्राह्मणग्रन्थमध्ये अथर्ववेद की गोपथ ब्राह्मण को पाश्चात्यजगत सव से पिछेवाला (अर्वाचीन) मानते है । शुक्ल के शतपथ, माध्यन्दिन और काण्व दो तरह के ब्राह्मण है । कृष्ण के तैत्तिरिय ब्राह्मण है । ऋग्वेद की ऐतरेय और कौषीतकी दो ब्राह्मण प्राप्त है । सामवेद की कौथुम शाखा में (१) छान्दोग्य, (२) पञ्चविंश, (३) षड्विंश, (४) तलवकार, (५) मन्त्र (वंश), (६) सामविधान और (७) देवताध्याय ब्राह्मण समेत सात ब्राह्मणग्रन्थ है । राणायनीय शाखा (साम) की जैमिनीय ब्राह्मण है । इन को आर्षेय ब्राह्मण भी कहेते है । जैमिनीय शाखा (साम) का उपनिषद्– ब्राह्मण को छान्दोग्य भी कहेते है । कृष्णयजुर्वेद की ब्राह्मण तैत्तिरिय ब्राह्मण है । कठ की कठ ब्राह्मण और कठकपिष्ठ की कठकपिष्ठ– ब्राह्मण अलग ही है । शुक्लयजुर्वेद की काण्वशाखा की ब्राह्मण भी शतपथब्राह्मण ही है लेकिन उस में १७ काण्ड है, और १७औं काण्ड उपनिषद् में आता है ।

१.३.५ वेद के भाष्यः

आचार्य सायण (१३वीं शताब्दी) ने चारों वेद की मन्त्र, ब्राह्मण मन्त्र, ब्राह्मण, आरंण्यक और उपनिषत् मे अहम भाष्य लिखें है । पूर्व और पश्चिमी सभी विद्वानों को वेद की अर्थ समझ्ने के लिये सायणभाष्य का बहुत बढा देन है । आजतक वेद की भाष्यों में सायणभाष्य ही प्रामाणिक है । वेद की भाष्यकार सायण के वाद और आगे की भी बहुत भाष्य हुये, लेकिन सायण को कोई जित नहीं सका ।

यजुर्वेद की तरफ माध्यन्दिन (शुक्ल) में महीधर और उब्बट की भाष्य प्रसिद्ध है । उब्बट ११वीं शतक और महीधर १६वीं शतक के जाने जाते है । वेदभाष्यकार में स्वामी दयानन्द सरस्वती की सुबोधभाष्य भी आधुनिक दृष्टि से बहुत आगे है ।

ऋग्वेद की भाष्यकारों में ज्येष्ठता क्रमानुसार स्कन्दस्वामी, उद्गीथ, माधवभट्ट, वेङ्कटमाधव, धानुष्कयज्वा, आनन्दतिर्थ, सायणचार्य ही श्रेष्ठ है । काण्व की शतपथ ब्राह्मण में नीलकण्ठी टिका होता था, लेकिन अभी उपलव्ध नहीं है । माध्यन्दिन शतपथ में उब्बट ने भाष्य लिखा था, लेकिन अभी अप्राप्य है । हरिस्वामी की भाष्य भी अधुरी है । हरिस्वामी की समय ६वीं शती है । ऐतरेय ब्राह्मण में गोविन्दस्वामी, षड्गुरु शिष्य और सायणचार्य ने भाष्य लिखे है । तैत्तिरीय ब्राह्मण में भवस्वामी, भट्टभाष्कर एवम् आचार्य सायण ने भाष्य लिखे हैं । ताण्डव ब्राह्मण में जयस्वामी ने, मन्त्र ब्राह्मण में गुणविष्णु ने, आर्षेय ब्राह्मण में भास्कर मिश्र ने, सामविधान में भरतस्वामी ने और सामवेद की सभी में सायण ने भाष्य लिखे हैं । सायणाचार्य ने लिखे हुये भाष्य निम्नानुसार हैं:
(१) तैत्तिरीयसंहिताभाष्य, (२) काण्वसंहिताभाष्य, (३) ऋग्वेदसंहिताभाष्य, (४) सामवेदसंहिताभाष्य, (५) अथर्ववेदसंहिताभाष्य, (६) तैत्तिरीयब्राह्मण्मभाष्य, (७) तैत्तिरीयारण्यकभाष्य, (८) ऐतरेयब्राह्माणभाष्य, (९) ऐतरेयारण्यकभाष्य, (१०) ताण्ड्यभाष्य, (११) षड्विंशब्राह्माणभाष्य, (१२) सामविधानब्राह्माणभाष्य, (१३) आर्षेयब्राह्माणभाष्य, (१४) देवताध्यायब्राह्माणभाष्य, (१५) उपनिषद्ब्राह्माणभाष्य, (१६) संहितोपनिषद्ब्राह्माणभाष्य, (१७) वंशब्राह्माणभाष्य, (१८) शतपथब्राह्माणभाष्य, आदि ।

वर्तमान में वेद की व्याख्या या अर्थज्ञान के लिये प्रयोग किया गया (१) भारतवर्षीय पद्धति, (२) पाश्चात्य पद्धति और (३) आध्यात्मिक पद्धति में से पाश्चात्य पद्धति आधुनिक तुलनात्मक

भाषाशास्त्र और इतिहास आधार मानते है, लेकिन भारतवर्षीय पद्धति में गुरुपरम्परा को आधार मनकर वेद की अङ्ग, उपाङ्ग एवम् इतिहास–पुराण साधन के रुप में लेते है । अध्यात्म में प्रायः सभी शब्दों को यौगिक मानकर एक ही परमेश्वर की अनेक नाम रुप हो गया मानते है । पश्चिमी विद्वानों ने कही शब्दों को मनोवादी अर्थ लगाकर वैदिक धर्म और भारतवर्षीय पुर्खो की निन्दा करते हैं, अन्यथा सिद्ध करने में भी प्रयत्नरत है । इस तरह की भ्रमात्मक वात गुरुकुल–परम्परा और वेदाङ्ग, उपाङ्ग एवम् धर्मशास्त्र पुराणेतिहास आदि ने अस्विकार करते है ।

१.३.६ आरण्यकः

वेद की तिसरी भाग आरण्यक है । गृहस्थाश्रम के समय के वाद वानप्रस्थ आश्रम प्रवेश करके वन (अरण्य) की शान्त और एकान्त वातावरण में परमार्थ के लिये अरणिमन्थन करके निकला हुवा अग्नि की उपासना करने की क्रम में प्रयुक्त वेद की इस भाग को आरण्यक भाग अर्थात प्राणविद्या (प्राणायाम–साधना) भी कहते है ।

वद की ११३१ शाखाऐं अलग अलग आरण्यक है, लेकिन वर्तमान ऐतरेयारण्यक, शाङ्ख्यायनारण्यक, बृहदारण्यक और तैत्तिरीयारण्यक समग्र रुप में प्राप्त है । वैदिक गुरुकुल परम्परा क्रमशः गुम् होते जाने से और आश्रम मर्यादा भी कालक्रम में क्षीण–प्रायः हो जाने से आरण्यक ही नहीं वेदों की हजारौं शाखाऐं की पठन–पाठन छुट रही है । सम्भवतः तक्षशिला और नालन्दा की पुस्तकालयों में जलकर वेदों की कई ग्रन्थ समूल नष्ट कर दिया गया हो सकता है ।

१.३.७ उपनिषत्:

वेद की अन्तिम भाग तथा ब्रह्मविद्या के प्रतिपादक उपनिषद् उप+नि+षद् अर्थात गुरुसनिन्निधि से ब्रह्मसामिप्य, ब्रह्मसारुप्य अर्थात ब्रह्मप्रापक ब्रह्म में पहुंचानेवाली विद्या मानते है । उपनिषद्‌विद्या प्रस्थानत्रयी गीता, ब्रह्मसूत्र और उपनिषद् में से मुख्य मानते है । उपनिषद् ने भारतवर्षीय दार्शनिक पद्धति को विश्व की सर्वोच्चता तक पहुंचाया है । उपनिषदों की संख्यानिर्धारण की सम्बन्ध में कई मतमतान्तर है । किसी ने १०८, किसी ने १०७ तो किसी ने १३३ तक उपनिषद् है कहते हैं । अर्वाचीन काल में अपने–अपने धर्म–सम्प्रदाय सम्बन्धी उपनिषद् भी बनाया गयी वातें अल्लोपनिषत् से स्पष्ट होता है । इन का भी संख्या २१३ तक मिलता है । मद्रास से ६० उपनिषद् प्रकाशित हुवा है । निर्णयसागर प्रेस से १०८ उपनिषद् छपा है ।

शंकराचार्य की भाष्यकृत १० उपनिषद् प्राचिनतम् और प्रामाणिक मानते है । १७वीं शताब्दी में दाराशिकोह की आज्ञानुसार फारसी भाषा में ४० उपनिषद् अनुवाद किया गया समझते है । उपनिषदों की प्रामाणिकता और प्राचीनता की क्रम में ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डुक्य, तैत्तिरीय, ऐत्तरेय, छान्दोग्य और बृहदारण्यकोपनिषत् सहित १० खास है । शंकराचार्य की भाष्य नही मिलता, फिर भी कौषतिकी, मैत्रायणी और श्वेताश्वरोपनिषत् की उल्लेख शंकराचार्य ने किया हुवा था, वो भी प्राचीनतर ही मानते है ।

उपनिषत्काल से बैष्णव, शैव, शाक्त, आगम और तन्त्र की विकास हुई वात कई विद्वान मानते है । श्वेताश्वरोपनिषत् में कपिल और सांख्य मत की भी उल्लेख की हुई है । वेद की त्रिदेवतावाद और त्रिलोकवाद उपनिषत्काल में कुछ अलग लगता है । मैत्रायणी उपनिषत् में त्रिदेव में ब्रह्मा, बिष्णु और महेश को दिखाते है । तैत्तिरीयोपनिषत् ने महादेव को, कठोपनिषत् ने बिष्णु को और

ईश–केन आदि ने परब्रह्म–परमेश्वर को सर्वेश्वरत्व मानते है । आधुनिक इतिहासवित् वि.पूर्व २५०० से १९०० वि.पू. की अवधि में उपनिषत् रचे हुये मानते है । १६४० ई.पू. में उपनिषत् की अनुवाद करके १६५७ में छपाकर यवन राजकुमार दारा शिकोह ने स्वयम् पढ्कर इस तरफ आकृष्ट होकर काशी में जाकर विद्वानों से उपनिषत् और हिन्दू धर्म की ओर अध्ययन किया गया दिखता है । काशी के विद्वानों ने अनुवाद किया गया ५० उपनिषत् की फारसी अनुवाद को दाराशिकोह ने एक महान रहस्य नाम से प्रकाशित किया । उन्हो ने "कुरान में सङ्केत किया गया अस्पष्ट वातें किताविम मक्तुनिन (गुप्त पुस्तक) कहने का मतलव उपनिषत् ही है" कहा है । यह फारसी अनुवाद फ्रेन्च यात्री बर्निएर ने फ्रान्स लेजाकर फ्रेन्च और ल्याटिन भाषा में अनुवाद करके ल्याटिन अनुवाद १८०२ इ. में प्रकाशित भी किया ।

इसी तरह वैदिक साहित्य की विकासक्रम में शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्यातिषशास्त्र भी वेद की षडङ्ग की रचना हुवा । कालक्रम से वेदाङ्ग नपढ्कर वेद पढ्ना कठिन हो गया । कल्पसुत्र के ४ विभाग बन गये, जसानुसार श्रोतसूत्र, गुह्यसूत्र, धर्मसूत्र और शुल्वसूत्र की विकास हुई । इसी क्रम में उपवेदों का भी विकास हुवा । इसी तरह वैदिक साहित्य आज के विश्व में अद्वितीय और अपार साहित्य बन गये । इस क्रम में धर्मशास्त्र, पुराणेतिहास, मीमांसा और आन्वीक्षिकी सहित के उपाङ्गों तक की विकास हुवा । ऋग्यजु: सामाथर्ववेद की क्रमशः आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद और स्थापत्य (वास्तु) वेद नाम के ४ उपवेद का भी विकास हुवा । कई लोग अर्थशास्त्र को भी उपवेद मानते है तो कई आचार्य इतिहासपुराण को पञ्चमवेद भी कहते है । कई तो साहित्य को पञ्चमवेद मानते है । इसी तरह अर्थशास्त्र और दण्डनीति का भी विकास हुवा । मानव–जीवन या राज्य–प्रशासन की प्रत्येक पक्ष में हरेक विधा में अनेक ग्रन्थ और दर्शन तैयार हुवा । इसी क्रम में लौकिक साहित्य में रामायण, महाभारत, १८ महापुराण, १८ पुराण, १८ उपपुराण, आदि अनेक ग्न्थ तैयार हुवा । फिर क्रमशः अर्थशास्त्र, राज्यशास्त्र, कामशास्त्र, वास्तुशास्त्र, नीतिशास्त्र, काव्य, महाकाव्य, खण्डकाव्य, नव्यकाव्य, नाटक, चम्पू, मुक्तक, नाट्यशास्त्र आदि का विकास हुवा । नाट्यशास्त्र के आचार्य भरतमुनि कहते हैः
"जग्राह पाठ्यं ऋग्वेदात् सामभ्यो गानमेव तु ।
यजुर्वेदादभिनयान् रसनाथर्वणादपि ॥ "

इस प्रकार समस्त संस्कृत–वाङ्मय का मूल श्रोत वेद ही होने का तथ्य स्पष्ट होता है और वेदमूलक होने से शास्त्र प्रमाण कहते है । पाश्चात्य विद्वान प्रो. म्याक्समूलर कहते हैः "संसार के सव से पुरानी कविता ऋग्वेद है, पुरानी साहित्य वैदिक साहित्य है । पश्चिमी सभ्यता भी पूर्व से मिला है । मूल तो हमारी भी पूर्व ही है ।"

१.४ पश्चिमी विद्वानों की योगदानः

वैदिक वाङ्मय की प्रचार–प्रसार एवम् प्रकाशन में हजारों पश्चिमी विद्वानों की महत्वपूर्ण योगदान रहा है । इस में सम्पन्नता ने भी साथ दिया है इसीलिये पश्चिमी विद्वानों की यह कार्य काफी आगे बढा है । परम्परानुसार वैदिक शब्दों की उचित अर्थ नसमझ्ने से इस का अनुवाद–ग्रन्थ से हिन्दूओं प्रति कई अनुचित और निर्मूल भ्रम भी रहा है, लेकिन वो कालक्रम से कम हो रहा है और हो भी रही है । पाश्चात्य जगत् में वेद की ऐतिहासिक अध्ययन प्रक्रिया को डा.राथ ने आगे बढाया । प्रो. म्याकडोनल और कीथ ने १९१२ इ. में वैदिक इनडेक्स १–२ भाग प्रकाशित किया । वेद में उल्लेखित आर्य, वर्ण, जाति, कृषि, ज्योतिष आदि विषय और जनक, वसिष्ठ, याज्ञवल्क्य, विश्वामित्र आदि के नामसूची समेत उक्त इन्डेक्स में व्रिटेन से प्रकाशित हुवा था ।

यह आज भी वेद और वैदिक साहित्य की अध्ययन में बहुत मदद्गार है । मैत्रायणी संहिता की प्रामाणिक अंग्रेजी अनुवाद डा. ए. बी. कीथ ने १९२५ में हावर्ड ओरिएन्टल सिरिज १७–१८ में भप्रकाशित किया । मैत्रायणी संहिता खोजकर प्रथम प्रकाशन करने का काम जर्मनी के डा. स्वोदर ने किया था । डा. कीथ ने यजुर्वेद में वर्णित सभी यज्ञों को वर्णन किया गया ग्रन्थ प्रकाशित किया था । यह सूची तैत्तिरीय संहिता के अंग्रेजी अनुवाद के भूमिका में छपा हुवा है । डा.स्वोदर, डा.कीथ, प्रो.म्याक्समूलर, प्रो.राथ आदि पश्चिमी विद्वानों ने वेद, वेदाङ्ग सम्बन्धी अनेक ग्रन्थ की प्रकाशन किया है । इस के वाद ही भारतवर्ष से स्वाध्यायमण्डल पारडी, गुजरात, बनारस, मुम्वई आदि स्थानों से संस्कृत के बहुतसारे ग्रन्थों की पुनर्मूद्रण किया गया । जर्मनी, व्रिटेन, पेरिस आदि मुलुक से भी अनेक प्रकाशककों की नाम से बहुत वेद, वेदाङ्ग एवम् अन्य ग्रन्थ छपे हुये है । सर विलियम जोन्स आदि से 'एसियाटिक सोसाइटी' और 'पवित्र प्राच्य ग्रन्थमाला–प्रकाशन' अन्तर्गत वेद, वेदाङ्गसहित के सयौं खास ग्रन्थों का प्रकाशन हुवा है ।

१.५ वेद और नेपाल की सान्दर्भिकताः

नेपाल की हिमाली उपत्यकाओं देवता, गन्धर्व, यक्ष आदि के विहारक्षेत्र तथा ऋषि–महर्षियों की तपोभूमि के रुप में विश्वप्रसिद्ध है । वेद ने **"यस्येमे हिमवन्तो महित्वा ॥"** (यजुर्वेद) बोलकर सगरमाथा आदि हिमालयों की महिमा वर्णन करते है, **"सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा ॥"** (शु.य.वे.) बोलकर हिमाली उपत्यका में विकसित हुवा वैदिक संस्कृति की श्रेष्ठता को दर्शाया है । इन्ही हिमाली उपत्यकाओं में तपस्या–साधना करके वसिष्ठ, पराशर, व्यास, वाल्मीकि, विश्वामित्र आदि आदि ऋषि–महर्षियों ने वेद की मन्त्र आत्मसात् (प्राप्त) किया था । वर्तमान नेपाल की तनहुं जिले की दमौली के नजदिक मादी नदी के किनारे की तपोवन में बैठ्कर वेदव्यास ने वेद के मन्त्रों को ऋक्, यजु, साम और अथर्ववेद के रुप में विभाजन किया था । शुक्ला सरस्वती (सेती गण्डकी) के किनारे बैठ्कर वेदव्यास ने वेदों की मन्त्रों को ऋक्, यजु, साम और अथर्ववेद करके ४ भाग में विभक्त किया था । शुक्ला सरस्वती (सेती गण्डकी) के किनारे बैठ्कर उन्हों ने १८ महापुराण, १८ पुराण, महाभारत, ब्रह्मसूत्र आदि ग्रन्थरत्नों की रचना किया था ।

१.६ उपसंहारः

इस प्रकार से यह वैदिक संस्कृति एवम् संस्कृत–वाङ्मय की भण्डार से राष्ट्भाषा नेपाली एवम् मैथिली, नेवारी, मगर, गुरुङ्ग, राई, लिम्वु, खश, शेर्पा, तामाङ्ग, थारु आदि सयौं राष्ट्यि भाषा और संस्कृति को फैलना मदद्गार हुवा और इधर के वैदिक, तान्त्रिक, वैष्णव, शैव, शाक्त, जैन, बौद्ध, सिख, आदि धर्म–सम्प्रदाय तथा भार, वर्ण और नेवार, शेर्पा, राई, मगर, गुरुङ्ग, तामाङ्ग, लिम्वु, मैथिल आदि जातजातियों में धार्मिक, सामाजिक सहिष्णुता की सञ्जीवनी देकर जीवित रखा है । नेपाली संस्कृति और सभ्यता की समग्र रुप में जनम् से मरण तक और उस के वाद लौकिक–पारलौकिक संस्कार, यज्ञकर्म, रीतिथिति, विधिविधान, सामाजिक मान्यता, मर्यादा की श्रोत वैदिक वाङ्मय ही रहेता आया है । वैदिक सभ्यता और संस्कृति का केन्द्र वशिष्ठाश्रम (देवघाट), व्यासाश्रम (दमौली), कौशिकाश्रम या विश्वामित्राश्रम (कोसीकोकाक्षेत्र, बराहक्षेत्र), याज्ञवल्क्य–जनक–नगरी (जनकपुर) आदि से इस तथ्य की साक्ष्य दे रहे है । इस तरह राष्ट्र की समष्टिगत एकता अखण्डता कायम करने में वैदिक संस्कृति की बहुत ज्यादा योगदान् रहा है ।

विश्व के जेष्ठतम् साहित्य के नाम से परिचित ऋग्वेद की प्रथम मण्डल की २४–३० सूक्त की करीब १०० मन्त्र विश्वामित्र के धर्मपुत्र शुनःशेप से दृष्ट है । वसिष्ठ के नाति शक्ति के पुत्र पराशर से दृष्ट मन्त्र ऋग्वेद की प्रथम मण्डल की ६५–७३ सूक्त की करीब ३० मन्त्र है । महर्षि

विश्वामित्र की करीब २३ सूक्त मन्त्र ऋग्वेद की तिसरी मण्डल में है। महर्षि कौशिक विश्वामित्र ने कोसी को अपनी बहन की रुप में ले ली है। ब्रह्मर्षि वसिष्ठ से सम्बद्ध मन्त्र ऋग्वेद की सप्तम मण्डल लगभग पुरे है। शतपथ–ब्राह्मण की १४वीं काण्ड (बृहदारण्यकोपनिषद्) में मिलनेवाले राजर्षि जनक के सभासद महर्षि याज्ञवल्क्य और उन की धर्मपत्नी मैत्रेयी तथा परमविदुषी गार्गी को शास्त्रार्थ–प्रसङ्ग से भी नेपाल की मिथिला नगरी को वेद–ब्रह्मविद्या की केन्द्र की रुप में प्रस्तुत किया गया है।

इसी तरह सीतोपनिषत्, मुद्गलोपनिषत्, आदि से भी नेपाल की प्राचीन विभूती की वैशिष्ट्य स्पष्ट किया है। महाभारतकाल के शङ्ख और लिखित के आश्रम सङ्खुवासभा, (एकलव्य) आदि ने भी नेपाल की प्राचीनता दिखाते है और श्रीरामचन्द्र ने राजा दशरथ को नेपाल की मुक्तिक्षेत्र, बराहक्षेत्र की यात्रा कराया हुवा प्रसङ्ग से भी वही वात दर्शाते है। योगी नरहरिनाथ की आधात्मिक नेपाल को इस प्रसङ्ग में और ज्यादा तथ्य प्रस्तुत करके नेपाल की हिमाली उपत्यका प्राचीन वैदिक युग की उद्भवस्थल की रुप में रहे हुये वात में महत्वपूर्ण प्रकाश किया गया है। इस प्रकार वेद और तत्सम्बद्ध संस्कृत वाङ्मय एवम् नेपाल की सान्दर्भिकता की प्रसङ्ग विशेष महनीय और मननीय हो गया है।

हरिॐ तत्सत् ..